॥ सद्गुरुचरणकमलेभ्यो नमः॥

समर्पण पत्रिका

श्री श्री श्री १००८ श्री श्री शान्त, दान्त, महन्त, बड़भागी, सौभाग्यादि गुणगणालंकृत पूज्य परमपूज्य श्रीमान् गुरुवर्य श्री त्रैलोक्यसागरजी महाराजकी परम पवित्र सेवामे—

आपने इस दासको शुभमिती वैशाष शुक्ल १२ बुद्धवार वीर सम्वत् २४३७ वि० सं० १९६८ को शुभ मुहूर्तके अन्दर महान् दुःखके दाता गृहस्थाश्रमसे मुक्तकर संयमरूपी नौकामे स्थान प्रदान किया है, अर्थात् अपनी निर्मल सेवामे शरण दियो है; इस अनहद उपकारको मै कभी नहीं भूल सकता।

हे पूज्य गुरुवर्य ! आप जैसे योग्य मुनिराज भव्य जीवोंको ज्ञान देकर कृतार्थ करते है, आपका शान्त गुण त्रैलोक्यमें प्रकाश कर रहा है आपकी संयमकी खप अलौकिक देखकर कौन आश्चर्यको प्राप्त नहीं हुआ होगा।

इसही लिये हे गुरुवर्य ! आपके उपरोक्त गुणोंको स्मरण कर तथा अनहद उपकारको मानकर यह लघु पुस्तक आपके चरण कमलोंमें समर्पण करता हूं सो कृपया स्वीकार करें।

आपके पदपंकजका—दास

आनन्दसागर

मु० कोटा—राजपूताना.

॥ श्रीजिनदत्तकुशलगुरुभ्यो नम ॥

भूमिका

सज्जनोः—

आप यह वात अच्छी तरहसे जानते होंगे कि इस पारावार संसारमें मग्न होकर प्राणी अनन्ताभव भ्रमण करता है।

इस वक्त जो विषय वासनामें ग्रस्त हुए रहनेसे उसे कुछ भी भान नहीं होता मगर पीछे दुर्गत्यादिमें जाकर अत्यन्त खेद करना पड़ता है जैसे दाद या खुजलीकी वीमारीवालेको खुजली खुनती वक्त तो कुछ भी मालूम नहीं होता परन्तु पीछेसे जलन होनेपर अपने किये हुवे कार्यका पश्चाताप करना पडता है।

इस पर कोई प्रश्न करे कि, इस संसारसमुद्रसे पार होनेका कोई सहल उपाय है क्या कि जिसको हासिल करके मनुष्य शीघ्र पार होजावे।

(उत्तर) जीहां; इसही लिये तो हमारे कृपालु, परोपकारी, वुद्धिमन्त, विचक्षण, मुनिराज श्रीआनन्दसागरजीने इस "सप्तव्यसननिषेध नामक" लघु ग्रन्थकी रचना की है।

आपने इसमें सातों व्यसनोंको स्पष्ट तौरपर वयान किया है कि जिनको मनुष्य त्यागकर अचिरात् मोक्षको प्राप्त होजाता है।

एक २ व्यसनकी व्याख्या ऐसे स्पष्ट तौरपर कीगई है कि अल्पज्ञ भी अच्छी तरहसे समझ जा सकता है।

इसके अन्तमें आपका बनाया हुआ श्रीदादा साहबका स्तवन भी छपवाया गया है अन्तमें मै उक्त मुनिराजको सहस्र वार धन्यवाद देकर आप सर्व सज्जनोंको सविनय निवेदन करता हूं कि कृपया इसको वारम्वार मननना पूर्वक पढें।

इसमें कोई दृष्टिदोषसे अशुद्धियें रहगई हों तो कृपया सुधारकर पढें।

आपका हितैषी–

प्रकटकर्त्ता.

॥ ॐ ॥

॥ श्रीजिनाय नम ॥

॥ श्रीजिनदत्त कुशल गुरुभ्यो नमः ॥

मंगलाचरणम्

सकल कुशलवल्ली पुष्करावर्त्तमेघो ।
दुरित तिमिरभानुः कल्प वृक्षोयमानः ॥
भवजल निधिपोतः सर्व सम्पति हेतुः ।
स भवतु सततं वः श्रेयसे पार्श्वदेवः ॥ १ ॥

अर्थः—(स श्रीपार्श्व देवः वः सततं श्रेयसे भवतु वे परम उपकारी श्रीपार्श्वनाथ स्वामी हमेशा तुमको कल्याण के करनेवाले होवो, (कथं भूतः सदेवः) कैसे हैं वे पार्श्व-नाथ प्रभु (सकल कुशल वल्ली) समस्त कुशलोंकी वेलरूप जैसे वेल फल फूलकी दाता है वैसेही आप भवो भवमें कल्याणको करनेवाले हैं (पुन कथं भूत सदेवः) फिर

कैसे हैं वे पार्श्वनाथ स्वामी (पुष्करावर्त्त मेघो) पुष्करावर्त्त मेघके समान, जैसे अवसर्पिणीके प्रथम आरेमें और उत्तसर्पिणीके षष्ठम ओरमें एक वक्त पुष्करावर्त्त मेघ वर्षनेसे १०००० वर्षतक पृथ्वीका तेह रहता है यानी इस मुद्दततक वगैर वर्षातके सर्व वस्तुओंकी प्राप्ति होती है; इसी प्रकार इन प्रभुका एक वार स्मरण करनेसे भवो भवमें सद्मार्गरूपी फलकी प्राप्ति होती है. (कथ भूतः सदेवः) फिर कैसे हैं वे नाथ (दुरित तिमिर भानुः) अन्धकारको दूर करनेमें सूर्य समान. जैसे सूर्य रात्रीके अन्धकारको दूर कर देता है, वैसेही आप अनादि कालके मिथ्यात्वको दूर करनेवाले हैं (पुनःकथं भूत. सदेवः) फिर कैसे हैं वे पार्श्व प्रभु (कल्प वृक्षोपमानः) कल्प वृक्षके समान; जैसे कल्पवृक्ष अवसर्पिणीके प्रथम ओरसे तृतीय तक और उत्सर्पिणीके चौथेसे छठे तक नाना प्रकारके फल देते है; वैसेही यह प्रभु मनोवांछित फलको देनेवाले हैं.

अवसरको पाकर यहां पर कल्प वृक्षके नाम व गुण बताता हूँ.

———*०*———

नम्बर	नाम कल्प वृक्ष	गुण
१	मत्तग	मधु समान पानी देवे.
२	भंगारा	सोने चांदीके भाजन देवे.
३	त्रुटी	बत्तीस प्रकारके नाटक देवे.
४	सूर्य	सूर्य समान प्रकाश देवे.
५	दीपक	दीपकके समान प्रकाश देवे.
६	चित्तांग	छओं ऋतुओंमें पाचोवर्णोंके पुष्प देवे
७	चित्तरसा	नाना प्रकारके भोजन देवे.
८	आभरणा	आभूषण देवे.
९	गेह	गृह देवे.
१०	वत्थ	वस्त्र देवे.

पुनः कथंभूतः सदेवः) फिर कैसे हैं वे त्रैलोक्यनाथ (भव जलनिधि पोतः) समुद्रसे पार करनेमें नौका (नाव) समान, जैसे नौका समुद्रसे पार कर देती है, अर्थात् तिरा देती है वैसेही इन प्रभुकी भक्तिसे अथाह संसाररूपी समुद्रसे पार होजाते है ।

एक वक्त श्रीगौतम स्वामीने दोनों कर जोड़ सविनय श्री-वीर परमात्मासे प्रार्थना की कि हे प्रभो ! इस संसारको समुद्रकी उपमा क्यों दीजाती है ? क्या इसमें समुद्रकासा दृश्य पना है; इस विषयमें निम्न लिखित प्रश्नोत्तर हुए ।

१ प्रश्न—हे प्रभो ! समुद्रमें तो जल (Water) है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसा जल है ?

उत्तर—हे गौतम ! जन्म मरण रूप जल है, जैसे जलका आवागमन होता है, वैसेही जन्म मरणका स्वभाव है ।

२ प्रश्न—हे नाथ ! समुद्रमें तो कीचड़ (Mud) होता है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसा कीचड़ है ?

उत्तर—हे गौतम ! काम भोगरूपी कीचड़ है, जैसे कीचड़का स्वभाव फसावटका है वैसेही काम भोगका जानना ।

३ प्रश्न—हे स्वामी ! समुद्रमें तो गड्ढे (Pits) होते हैं, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसे गड्ढे हैं ।

उत्तर—हे गौतम ! तृष्णारूपी गड्ढे है, जैसे गड्ढेका स्वभाव गहरेपनका है होता है, वैसेही तृष्णा जानना ।

४ प्रश्न—हे देवाधिदेव ! समुद्रमें तो तरंग (Waves) उठती हैं, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसी तरंग हैः ?

उत्तर—हे गौतम ! अहंकाररूपी तरंगें हैं, जैसे तरंगें उछलती हैं, इसी प्रकार अहंकारी पुरुषका चित्त उछलता हुआ रहता है।

५ प्रश्न—हे त्रैलोक्य पूज्य ! समुद्रमें तो मगर मच्छादि (Crocoelile) महा भयानक जानवर होते हैं, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसे जानवर है ?

उत्तर—हे गौतम ! दुष्ट मनुष्यरूपी मगर मच्छादि हैं, जैसे मगर मच्छादि भयानक जानवर निरपराधि जीवोंको भक्षण कर जाते हैं वैसेही दुष्ट लोग निरपराधि जीवोंको तकलीफ पहुँचाते हैं।

६ प्रश्न—हे सर्वज्ञ प्रभु ! समुद्रमें तो मछलियें (Fishes) वगैरा अनेक छोटे २ जानवर होते है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसे जानवर हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! कुटुम्ब परिवाररूप छोटे २ जानवर है जैसे यह जानवर जलमे स्थिर रहे हुवे प्राणीके शरीरको चूंट चूंट खाते हैं, वैसेही कुटुम्ब परिवार नाना प्रकारके दुःख देते हैं।

७ प्रश्न—हे वीतराग देव ! समुद्रमें तो चट्टाने (Rocks) होती है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसी चट्टाने है।

उत्तर—हे गौतम ! अष्टकर्मरूपी चट्टाने हैं जैसे चट्टाने चलती नावको रोक देती हैं, उसी प्रकार चेतनको मोक्ष मार्गमें प्रवर्त्तते हुए अष्टकर्म रोक देते हैं।

८ प्रश्न—हे जिनेश्वर! समुद्रमें तो भवरियें (Wherlings) होते हैं, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसी भवरियें हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! दगाबाजीरूपी भवरियें है जैसे भवरियें चक्कर मारती हैं, वैसेही दगलबाज अपनी कपट रचनामें चक्कर मारा करता है।

९ प्रश्न—हे त्रैलोक्य तिलक! समुद्रमें तो मोती, माणक, रत्नादि जवाहिरात (Jwels) होते है इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसे जवाहिरात हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! चतुर्विधसंघ (साधु, साध्वी, श्रावक श्राविका) रूप जवाहिरात हैं, जैसे सारे समुद्रमें जवाहिरात उत्तम चीजें है वैसेही यह संसारमें यह चार वर्ग उत्तम हैं।

१० प्रश्न—हे त्रैलोक्यनाथ! समुद्रमें तो कंजी (Moss) होती है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसी कंजी है ?

उत्तर—हे गौतम! लोभ रूपी कंजी है; जैसे कंजीपर पैर रखनेसे रपट जाता है, उसी प्रकार लोभी प्राणी स्थान २ पर धोखा खाता है।

११ प्रश्न—हे जगदीश! समुद्रमें तो वाडवानल अग्नि होती है, इस संसाररूपी समुद्रमें कौनसी अग्नि है ?

उत्तर—हे गौतम ! क्रोधरूपी अग्नि है, जैसे अग्नि हरएक चीजको जला देती है, वैसेही क्रोध शुभ कार्यको नष्ट कर देता है और अज्ञान दशामें प्रवृत्त कर देता है।

१२ प्रश्न—हे भवतारण ! समुद्रके तो तट (Shore) होता है, इस संसाररूपी समुद्रका कौन सा तट है ?

उत्तर—हे गौतम ! मोक्षरूपी तट जानना. जैसे प्राणी बड़े २ संकट उठाकर समुद्रसे पार होकर सुखी होते हैं, वैसेही महा दुःखके भोगी इस संसारसे पार होकर मोक्ष (Solvation) में प्राप्त होजाते हैं।

इस प्रकार कई एक प्रश्नोत्तर हुये।

(पुन कथं भूतः स देवः) फिर कैसे हैं वे प्रभु (सर्व सम्पत्ति हेतु) मोक्षरूपी सर्व सम्पत्तिको देनेवाले हैं।

प्रथमही प्रथम मांगलिकके वास्ते श्रीवीतराग प्रभुको नमस्कार किया गया।

साथका साथ श्रीगुरू महाराजका स्मरण करना भी उचित समझता हूं, कारण कि यावत गुरू महाराजकी कृपा न हो कोई कार्य सफलताको प्राप्त नहीं होसक्ता।

प्रथम स्वर्गस्थजैनाचार्य श्री श्री श्री १००८ श्री श्रीमद् सुखसागरजी महाराजको सविनय नमस्कार करता हूं जिनकी बदौलत इस सिंघाड़ेमें आनन्द मंगल वर्त्त रहे हैं और सर्व साधु साध्वी चौतरफा जैन धर्मका झंडा निडर फहराते हुए अपनी आत्माका कल्याण करनेमें कटिवद्ध हैं।

तत्पश्चात् स्वर्गस्थ पटधर श्रीभगवानसागरजी महाराज को जिन्होंने फिर अनेक भव्य जीवोंको प्रतिबोध देकर आत्म कल्याण किया।

तत्पश्चात् स्वर्गस्थ पट्टधर श्रीछगनसागरजी महाराजको जिन्होंने कि चतुर्विध संघपर अपने ज्ञानकी अपूर्व वृष्टिकी और अन्तमें ५२ उपवास करके अपनी आत्माका कल्याण किया ।

तत्पश्चात् विद्यमान पट्टधर तथा गुरु महाराज श्रीत्रैलोक्य-सागरजी महाराजको नमस्कार करके प्रार्थना करता हूं कि धन्य हो आपको कि आप अहर्निश ज्ञानाभ्यास करके अपने ज्ञानावर्णीय कर्मको क्षय करते हैं तथा बाल जीवोंको ज्ञान दान देकर उन्हें कृतार्थ करते हैं साधु, साध्वी, श्रावक श्राविका आदि सर्वही (जो कि आपकी कृपारूपी कल्पवृक्षकी छायामें निवास करते हैं) आपके अतुल उपकारको कभी नहीं भूल सकते । कहांतक तारीफ कीजाय आपका उपकार बुद्धि अवर्णनीय है, आपकी शान्त मुद्राके दर्शन करके कौन ऐसा होगा कि जो शान्तताको प्राप्त न हो, इस दासपर जैसा अनुग्रह है उससे दिन दूना और रात चौगुना बढ़ावें ।

आपको यह भली प्रकार विदित है कि जब कोई कार्य किया जाता है तब प्रथम महानुभावोंका स्मरण किया जाता है ताकि वह कार्य आद्योपान्त सानन्द निर्विघ्नतासे प्राप्त हो ।

अब मैं अपने खास विषय (Subject) पर झुकता हूं, सभ्यगण इसको ध्यान पूर्वक पढ़ें ।

यह विषय यद्यपि बहुत गहन है, तदपि गुरु महाराजके कृपाका अवलंबन लेकर किंचित् मात्र दिखाता हूं आगे (पर्व

काल) भी बड़े २ आचार्योंने ग्रंथ बनाए उनमें महानुभावोंका सहारा (Shelter) लिया है, देखिये मानतुंगाचार्य महाराज अपने बनाए हुए भक्तामर स्तोत्रके षष्ठम श्लोकमें फरमाते हैं—

अल्पश्रुतं श्रुतवतां, परिहास धाम ।
त्वद्भक्ति रेव मुखरी कुरुते बलान्माम् ॥
यत्कोकिलः किलमधौ मधुरं विरौति ।
तच्चारु चाम्रकलिका निकरैकहेतु ॥ १ ॥

अर्थ—हे प्रभो ! मै थोड़ा तो पढ़ा हुआ हूं और विद्वज्जनोंके समक्ष हास्यका स्थान हूं, मगर तौ भी आपकी भक्तिही इस स्तोत्रकी रचना करनेमें मुझे वाचाल करती है, यथा वसन्तऋतुमें कोयल मधुर स्वरसे बोलती है वहांपर निश्चय करके आमकी कलियोंका समूहही हेतु भूत है ।

अब मै अपने विषयकी व्याख्या आरम्भ करता हूं, मगर इसके प्रथम सातों व्यसनोंके नाम लिखनेका प्रयत्न करता हूं।

द्यूतंच मासंच सुराच वेश्या ।
पापार्द्धिचौरी परदार सेवा ॥
एतानि सप्त व्यसनानि लोके ।
घोराति घोरं नरकं ददन्ति ॥ १ ॥

अर्थ-जुआका खेलना, मांसका खाना, मदिराका पीना, वेश्याका भोगना, शिकारका खेलना, चोरीका करना, परस्त्रीका गमन

करना, ये सप्त व्यसन जो प्राणी सेवन करता है वह घोरातिघोर नरकको प्राप्त होता है।

यहांपर कोई प्रश्न करता है कि इन सातों व्यसनोंके अन्दर प्रथम व्यसनमें जुआकोही क्यों फरमाया ? क्या श्लोकके कर्त्ता पुरुषकी मरजीही कारण है या अन्य ?

उत्तरमें मालूम हो कि कई एक श्लोक दोहे, चोपाइये कवित्त, छन्द, सोरठे, स्तवन, सज्झाये, स्तोत्र, स्तुतियें चैत्य वन्दनादिमें हरएक वात आगे पीछे अकारणही कर्त्ता पुरुष अपनी इच्छानुसार रख देता है तथा कारण पाकर भी रखता है तो भी प्रश्नकर्त्ता ! यहां पर "जुआ" नामक व्यसन प्रथमही प्रथम फरमाया उसमें किंचित् कारण है वह यह है कि इस एक व्यसनसे सातोंकी प्राप्ति होती है, इसपर एक दृष्टान्त लिख दिखाता हूं।

किसी एक ग्रामका राजा बड़ाही जुआरी था, एक समय ऐसा हुआ कि वह अपनी सर्व सम्पति हार गया, यहांतक कि उसके नौकरोंको वेतन तक देना कठिन होगया, नहीं २ इतनाही नहीं वल्कि खाने तककी मुश्किल बीतने लगी तब अन्याय करना आरम्भ किया।

अपने नौकरोंको यह आज्ञा दी कि गांवमें जहां २ द्रव्य हो लूट लावो।

नौकर लोग आज्ञाको पाकर सेट साहूकार और सबही द्रव्यवानके मकानपर पहुँचे, उनकी स्त्रियोंके पाससे सर्व जेवर (Grnoments) छीनने लगे जो स्त्रियें न देने लगी उनकी

बड़ी दुर्दशा की और सर्व माल असबाव लूटने लगे, इस तरह प्रजा बड़ी दुखित होगई।

जब राजाही ऐसा अकृत्य करने लग जावे तो विचारी रय्यत किसका शरण लेवे, देखिये कहा है—(Subject)

यदि पित्रा सन्तापितः शिशुर्मातुः शरणं गच्छति, यदि माता सन्तापितः पितुः शरणं गच्छति, यदि उभाभ्यां सन्तापितो महाजनानां शरणं गच्छति, यदि त्रिभिः सन्तापितो राजाग्रे गच्छति परं यदि राजापि अन्यायं करोति तदा कस्याग्रे कथ्यते।

अर्थ—यदि पिता लड़केको दुःखदे तो माताकी शरण जाता है, माता दुःखदे तो पिताकी शरण जाता है दोनो दुःखदें तो महाजनोंकी शरण जाता है और तीनों दुःख दे तो राजाकी शरण जाता है। मगर अगर राजाही अन्याय करे तो किसको कहे।

अहा शुभकर्मानुयोगसे इस अवसरमें एक जैनाचार्यका पदार्पण हुआ।

आप स्वामीको सर्व प्रजाने अपना दुःख निवेदन किया, सुनतेही करुणालय मुनि महाराजने यह अभिग्रह धारण किया कि मैं तबही अन्नजल ग्रहण करूंगा जब इन लोगोंका दुःख शमन होजाय।

आप जानते हैं कि जैन मुनिके अन्दर स्वभाविकही करुणा होती है कारण कि उनके असूल (Puties) ही ऐसे गए हैं कि जिससे कठोर हृदय होनाही सम्भव नहीं हो

अलवत्ता निर्दय हृदय उस हालतमें हो सकता है कि जब व अपने कर्तव्योंसे विरुद्ध चलें।

उन महानुभावने विचार किया कि वगैर कोई कपट रचना किये यह कार्य वनना कठिन है और कपट रचना जैन मुनिका कर्तव्य नही अव क्या करना चाहिये।

विचार शक्तिसे यह मालूम हुआ कि "जैन मजवकी स्याद्वाद शैलि है" हरएक वस्तु सापेक्ष सिद्ध है एकान्त कोई वात नही।

कपट दो प्रकारका होता है एक द्रव्य कपट दूसरा भाव कपट, द्रव्य कपट उसे कहते हैं जिससे कर्म वन्धन न हो केवल नाम मात्रका कपट हो, भाव कपट उसे कहते हैं जिससे कर्मका वन्धन होकर महान दुःख उठाना पड़े।

वस तो मुझको यहां पर द्रव्य कपट रचनेसे कोई वाधा नहीं केवल परोपकारके निमित्त करता हूं; ऐसा विचार कर निम्न लिखित अद्भुत घटना की।

वे मुनीश्वर मछलियें पकड़नेकी जाल (Net) शिरपर धारण करके श्मशान भूमिमें प्राप्त हुए, वहां ग्रामके सर्व लोग दर्शनार्थ आने लगे, वहुतसे लोगोंने राजासे अर्जकी कि हे स्वामिन्! श्मशान भूमिमे एक कोई महात्मा कायोत्सर्गमे खड़े हैं, न वोलते हैं, न चलते हैं, न सोते हैं, न वैठते हैं, न खाते हैं, न पीते हैं, न हिलते हैं, आदि कोई कार्य नहीं करते राजा इस प्रकार श्रवण करके मुनीश्वरके दर्शनार्थ श्मशान भूमिमें प्राप्त हुआ, देखते क्या हैं कि हजारों आदमि उसे

हुए हैं और आप मुनि महाराजका कायोत्सर्गध्यानमें लीन हैं।

इस हालतको देखकर राजा बड़ा आश्चर्यको प्राप्त हुआ कि उफ ! ऐसे महात्मा होते हुए यह जाल शिरपर क्यों धारण की है, क्या कोई कपड़ा तो नहीं है ? ऐसा विचारकर राजा (King) ने मुनि महाराज (Monk) को सविनय प्रश्न किये ये प्रश्न तथा मुनीश्वरके उत्तर एक कवित्तमें लिख दिखाता हूं।

कवित्त।

स्वामिन यह कथा, नहीं मछली मारनेको जाल है।
खेले हैं शिकार आप, मांस चाह भायने ॥
मांसहू भखे हैं आप, जब सुराकी खुमारि होय।
सुराहू पिवे हैं आप, वेश्या संग जायते ॥
वेश्याहू प्रसंग करे, परस्त्री जब मिले नाहीं।
परस्त्री हू गमन करे, दाम चोर लाए थे ॥
चोरी हू करे हैं आप, जब जूवनमें हार होय।
एते व्यसन सात एक जूआमें समाए हैं ॥

इस प्रकार उन परोपकारी मुनिवर्यने बोध देकर उस राजाके दुराचरण दूर किये और प्रजाको सुखीकी।

तात्पर्य-कि इस प्रकार एक जुँआसे सातों व्यसनोंकी प्राप्ति होती है।

अब एक २ व्यसनकी अलग २ व्याख्या करता हूं मुज्ञ प्राणी ध्यान पूर्वक पढें।

पहिला व्यसन जुँआका खेलना।

इस व्यसनको सेवन करनेसे द्रव्य हीन होकर महान दुःख उठाना पड़ता है।

देखिये "जुँआ" (Gambling) से पांडव लोग अपनी रानी द्रौपदीको हार गए, इतनाही नहीं बल्कि नाना प्रकारके नुकसान होते हैं कहा है—

द्यूतेनार्थयशः कुलक्रमकला सौन्दर्यतेजःसुहृत्।
साधुपासनधर्मचिन्तनगुणा नश्यंतिसाधोरपि॥
यद्वत्पांडुसुतेषुतच्चुतसुधिष्वादित्यभावार्जिते।
विश्वेकिंमतसारस्फुटं घटपटस्तंभादि नालक्ष्यते॥१॥

अर्थ—सज्जन पुरुष भी अगर द्यूत (जुआ) के व्यसनको सेवन करने लगजावें तो उनके धन, यश, कुलमर्यादा, चतुराई, सुन्दरता, तेज, प्रेम, मुनिवरोंकी सेवा, धर्मके विचारादि गुण नष्ट होजाते हैं जैसे कि सुबुद्धिसे च्युत हुए पांडु पुत्रोंकी इस द्यूतसे दुर्दशा हुई सत्य है संसारके अन्दर सूर्यके मौजूद होनेपर भी जब अन्धकार प्राप्त होता है तब घटपट स्तम्भ वगैरह अदृश्य होजाते है।

और भी कहा है—

मायां करोति विकरोति सदैव सत्यं ।
क्रोधं दधाति विदधाति बहूनन र्थाम् ॥
चौर्ये मतिं वितनुते तनुते च दोषान् ।
द्यूतेरतो भवतिचेन्मनुजःपृथिव्याम् ॥ १ ॥

अर्थ—यदि प्राणी पृथ्वीमें जुआ करने लगजाय तो इतने दोष उत्पन्न होजाते हैं, माया करता है, सत्यका विकार कर देता है, क्रोधको धारण करता है, चोरीकी मति करता है आदि बहुतसे अनर्थोंको सेवन कराता हुआ दोषोंको विस्तीर्ण करता है ।

जुआवालेका कभी विश्वास नहीं किया जाता, और यावत् प्राणी विश्वास पात्र न हो कोई कामकी साफल्यता नहीं कर सकता ।

इस व्यसनसे अहोरात्र आर्त्तरौद्र ध्यान (जो कीर्त्ति पंच और नरक गतीके दाता हैं) में वर्त्तता है न तो वह "धर्म-कार्य" (Religious Work) कर सकता है न शुद्ध व्यवहार केवल लोभही लोभमें समय व्यतीत होता है, लोभ एक ऐसी बुरी चीज है कि प्राणीकी अक्ल (Sence) भ्रष्ट कर देती है, लोभी प्राणी स्थान २ पर दुःख उठाता है, देखिये एक धनाढ्य लोभी पुरुषकी बड़ी दुर्दशा हुई ।

किसी ग्राममें एक धनाढ्य सेठ (Rich man) रहता था एक वक्त वह व्यापारके वास्ते विदेशमें गया, ज्योंही वह समुद्रमें जहाजों द्वारा सफर (Traveling) कर रहा था कि अचानक महा प्रचण्ड वायु (Storms) चलने लगी जिससे जहाजें पानीमें डूबने लगीं। इस महा दुखदाई हालको देखकर उसने अपने इष्टदेवको स्मरण किया और प्रार्थनाकी कि हे नाथ यदि यह मेरी नाव न डूबे और मैं सानन्द समुद्रपार होजाऊं तो एक नारियल (Coconut) आपके चरणोंमें अर्पण करूंगा, दैवकी कृपासे वह कुशलतापूर्वक पार होगया।

जब कि वह शहरके अन्दर पहुंचा, एक दुकानदारके यहां जाकर पूछा कि भाई मुझको एक नारियलकी आवश्यकता है क्या किम्मत (Price) लोगे उसने कहा दो आने इसने कहा पौने दो आने इस प्रकार आठ दुकानोंपर फिरा तो हरएक एक २ पैसा कम बताने लगा अखीर आठवीं दुकान पर पाव आना किम्मत बताया तब सेठ कहने लगा कि अर्ध पैसेमें दो तो लेलूं, दुकानदार समझा यह कोई महा लोभी है ऐसा जानकर कहा सेठजी आप पैसे क्यों खर्च करते हो ? यहां से दो माइल पर एक नारियलका वृक्ष है वहांसे मुफ्त ले आइये, सुनतेही इन वचनोंके वह सेठ हर्षित होकर जहांपर नरियलका दरख्त था गया, देखता क्या है कि वह दरख्त फलोंसे लदाझूम है देखकर विचार करने लगा कि बहुतसे फल लेलूं लोभवश होकर एकदम दरख्त (Tree) पर चढ़गया एक हाथसे साखा (Branch) पकड़

रक्खी और एक हाथसे नारियल तोड़ने लगा जब एक हाथके बलसे नारियल न टूटने लगा तब विचार किया कि दूसरा हाथ भी मिला दूं और झटसे तोड़कर पीछी साखाको पकड़ लूंगा, ज्योंही उसने दोनों हाथोंसे फलको खींचा कि उस झटकेसे स्थान छूट गया और उस फलको लटका हुआ झोला खाता है, अब वह विचार करने लगा कि हे प्रभो! यादि मैं पैसे देकर नारियलको ले लिया होता तो इतना कष्ट न उठाना पड़ता हे नाथ! अब मैं क्या करूं? सच है कहा भी है कि:—

दोहा।

मक्खी बैठी सहत पर, पंख लिये लिपटाय।
हाथ मले अरु सिर धुने, लालच बुरी बलाय॥ १॥

इतनेमें एक हाथीवाला आ निकला, देखकर सेठने कहा हे भाई! इधर आना जरा दीन दुखियाकी खबर लेना सुनते ही हाथीवाला वहां पहुंचा, उस लटके हुए सेठको देखकर भयभीत हो गया उसने पूछा रे भाई तू कौन है? क्या भूत है, पिशाच है, यक्ष है, राक्षस है, दैत्य है, कौन है तब सेठने कहा भाई मैं इन पांचोंमेंसे कोई नहीं हूं मैं तो

अमुक २ सेठ हूं इस २ प्रकार दुःखमें ग्रस्त हो रहा हूं यदि तू कृपा करके मुझे हाथी (Rlephant) पर खड़ा होकर उतार ले तो मेरे पास जो दश हजार रुपये हैं उसमेसे आधे यानी पांच हजार रुपये तुझे समर्पण करूंगा इस बातको सुनकर वह लोभी हाथीवाला बोला यदि सात हजार दे तो उतार लूं वरना नहीं, सेठने सोचा कि जान (Life) चली जायगी इससे तो रुपये देना वहतर है कारण कि अगर जिन्दे रहेंगे तो बहुत सा द्रव्य उपार्जन करेंगे ऐसा विचारकर कहा अच्छा भाई तुम्हारे कथनानुसार रुपये देनेको मैं आमादा हूं इस प्रकार इकरार होनेपर वह हाथीको नारियलके दरख्तके नीचे ले गया अम्बाड़ी(Letter) पर खड़ा होकर उसको उतारनेको तत्पर हुआ मगर पैरोंको उठाकर लम्बे हाथ करने पर भी कुछ ऊँचा रह गया इस वास्ते विचार किया कि थोड़ा सा कूदकर शीघ्रही उतार लूं, हाथीको विश्वासकर ज्योंही उसने कुदकी मारकर पैर पकड़े कि हाथी चल पडा अहा ! क्या कहीं एक की जगह दो लोभी लटके हुए झोले खा रहे हैं इतनेमें एक घोड़ा वाला आया उसकी भी वही दशा हुई जो कि हाथीवाले की हुई अब तो तीनोंके तीनों लटक रहे हैं.

अब वह घोड़ावाला और हाथी वाला उस सेठसे प्रार्थना करते है कि हे भाई सेठ ? ऐसा मत करना कि तुम हाथ छोड़ दो वरना हम दोनो मर जायेंगे, इधर उनका कहना हुआ कि उधर उस सेठके शिरमें खुजली चली ज्यो ही उसने खुजली खुजनेको एक हाथ उठाया कि दूसरा हाथ भी रपट गया रपटते ही वे तीनों एकपर एक गिरपडे।

देखिये इस प्रकार लोभी पुरुषोंकी बड़ीही दुर्दशा होती है और जुआ परिपूर्ण लोभसे भरी हुई है इस लिये जो आत्म हित वांछक। इस व्यसनको विलकुल परित्याग कर देना चाहिये.

दूसरा व्यसन मांस भक्षण।

———०———

इस व्यसनसे शारीरिक और आत्मिक दोनों ही हानी होती है।

बड़े २ डाक्टर, वैद्य और हकीमोंने पदार्थ विज्ञान (Since) से यह बात साबितकी है कि मांसका खाना सर्वथा हानिकारक है इससे नाना प्रकारकी व्याधियॉ (Desease) उत्पन्न होती हैं।

सुना गया है कि विलायतके अन्दर एक "विजीटेरियन सोसाइटी" खोली गई है जिसका खास यही उद्देश है कि मांसको भक्षण नहीं करते हुए वनस्पतियोंपर निर्वाह करना फल दायक है, मांस भक्षण करने वालोंका कथन है कि इससे शरीर पुष्ट होता है मगर जहांतक विचार किया जाता है विदित होता है कि अन्नादि पदार्थोंमें विशेष बल शक्ति है देखिये किसीने कहा है कि:—

मांसा दश गुणां पिष्टं, पिष्टा दश गुणंपयः ॥
पय सोष्ट गुणं चान्न, मन्नादश गुणं घृतं॥१॥

अर्थ—मांससे पिसानमें दशगुणा, पिसानसे दूधमें दश गुणा, दूधसे अन्नमें दशगुणा, अन्नसे घृतमें दशगुणा बल होता है।

आत्मिक यह नुकसान है कि मांस खानेवाला निर्दय हुआ करता है, जहांतक प्राणिके घटमें करुणा नहीं होती सुकृत नहीं कर सकता और अकृत्योंमे हमेशा अशुभ कर्मका बन्धन होता है जिससे आत्मा भारी होकर महान् कष्ट उठाती है इसलिये—

भो देवानुप्रिय ! जो अपना हित चाहते हो तो मांस भक्षण सर्वथा परित्याग करना चाहिये, जिससे इस लोक और परलोक दोनोंमें सुखी होजाओ ।

तीसरा व्यसन मदिरा पान ।

इस व्यसनसे प्राणी अपने द्रव्य और बुद्धिको नष्ट कर देता है तथा कुटुम्ब परिवार राज-दरबारादिमें बड़ी दुर्दशा करता है स्थान २ पर हँसीके पात्र होता है देखिये कहा भी है—

दोहा ।

नशा न नरको चाहिये, द्रव्य बुद्धि हर लेत ।
नीच नशाके कारणे, सब जग ताली देत ॥१॥

नशेके अन्दर वे भानता होजाती है जिससे द्रव्यका नष्टपना होकर कंगाली दशामें प्राप्त होजाता है, कुटुम्बका पोषण करना कठिन होजाता है, तथा ज्ञान नष्ट होनेसे अज्ञान दशामें वर्त्तता हुआ नाना प्रकारके अकृत्य करके दुर्गतिका भागी होता है ।

मद्यके अन्दर मोहित हुए प्राणीको कृत्याकृत्य कुछ नहीं सूझता है, किसी कविने कहा है—

मद्यंमोहयतिमनोमोहितचित्तस्तुविस्मरतिधर्मम् ।
विस्मृतधर्माजीवो हिंसामविशङ्कमाचरति ॥ १ ॥

अर्थः-मद्य मनको मोहित (विचार रहित उन्मत्त) करता है और उन्मत्त पुरुष धर्मको भूल जाता है. धर्म रहित निर्भय स्वच्छन्द होकर हिंसादिका आचरण करने लग जाता है. इसलिये मद्यको सर्वथा तजना चाहिये ।

और भी कहा है—

चित्तभ्रान्तिर्जायते मद्यपानात् ।
भ्रान्ते चित्ते पापचर्या मुपैति ॥
पापं कृत्वा दुर्गतिं यान्ति मूढा ।
स्तस्मान् मद्यं न पेयं ॥ १ ॥

अर्थ-मदिरा पीनेसे चित्त भ्रान्त होजाता है, भ्रान्त चित्तसे पापका आचरण प्राप्त होता है; इस लिये मदिरा कदापि पान न करना ।

उपरोक्त श्लोकोंसे आपको विदित होगया होगा कि मदिरापान करना कितना बुरा है इसलिये—

भो धर्मानुरागी ! इस दुराचरणसे हमेशा बचते रहना चाहिये ।

चतुर्थ व्यसन वेश्या गमन।

इस व्यसनसे इतना अनर्थ होता है कि जिसकी हद्द नहीं क्या माता, क्या वहिन, क्या पुत्री आदि सर्वही स्त्री वत् होते हैं; वड़े २ राजा, महाराजा, सेठ, साहूकार जो कि भरपूर इज्जत (Honour) से भरे हुए है अपनी कुलमर्यादानुसार हरएक सम्बन्धियोंसे शुद्ध परिचय रखते हैं।

अगर इन इज्जतदार लोगोंको इतना भी कह देवें कि तेरी माताके दो पति हैं। (Husbanbs) तेरे तीन वहनोई (Sisterinlaus) तेरे चार जंवाई (Daughterinlaws) है तो उसपर कुपित होकर बड़ा दंगा मचाते हैं मगर वेश्यागमनमें वह शुद्ध परिचय इस प्रकार नष्ट होता है कि अल्पज्ञ लोगोंको भानतक नहीं पड़ता, यह भली प्रकार विदित है कि वेश्याके यहाँ जानेको किसीको भी मुमानियत नहीं है जो दाम (Ser) दे वहीं जा सक्ता है तो सोचिये कि जैसे एक पुरुष वेश्या (Prostitute) गमन करनेको गया, उसके गमनसे गर्भ (Pragnaney) रह गया नव मास व्यतीत होनेपर एक पुत्री प्राप्त हुई, क्यों साहिब ? वह लड़की क्या शीलव्रतको अंगीकार करेगी ? तथा एक पतिसे दूसरा पति नहीं करेगी।

नहीं २ कदापि नहीं वह तो सोलह शृंगार धारण करके उम्मदा सजे हुए कमरेके झरोके (खिडकी) में बैठकर चलते पुरुषोंको नाना प्रकारके हाव भाव दिखावेगी तथा पुरुषोंको इशारे वाजीसे बुलावेगी और मौजूदा पुरुषके ऊपर ऐसे कटाक्ष नेत्र डालेगी कि जिससे वह इन्तहल कामातुर होजाय और कई एककी यहांतक दुर्दशा बिगड़ती है कि जब वो उन कटाक्ष नेत्रोंसे वे भाव होजाता तब वह दुष्टणी उस बेवकूफ (Mad) का मॉथवा सर्व द्रव्य लेकर निकाल देती है, तात्पर्य कि वह पुत्री वेश्याहीके सर्व कर्तव्योंको करेगी, अब उसही पुत्रीके साथ चाहे पिता चाहे भाई चाहे पुत्रादि कोई भी संभोग कर आवे कोई रोक टोक नहीं हाय ! हाय ! ! धिक्कार है ! ! ! उन पुरुषोंको जोकि ऐसे अनर्थ करते हैं ।

यदि कदाचित् वो पिता (जिसे कि वह वेश्याकी पुत्री पैदा हुई है) न भी गमन करे तो कागज कलम लेकर जरा द्वारपर बैठकर गिनती तो करे कि एक पुत्री और कितने जँवाई वाह ! वाह ! पुरुषार्थको धारण करनेवाले हो तो ऐसेही हों ।

और भी देखिये इससे शारीरिक, व्यवहारिक और धार्मिक कितने नुकशान होते हैं।

कवित्त ।

कायाहूसे काम जात, गांठहूसे दाम जात, नारीहूसे नेह जात, रूपजात रंगसे । उत्तम सब कर्म जात, कुलके सब धर्म जात, गुरुजनकी शर्म जात, कामके उमंगसे ॥ गुण रंग रतिजात, धर्महूंसे प्रीति जात, राजासे प्रतीतजात, अपना मतभंगसे । जप जात, तप जात, संतनकी आश जात, शिव-पुरवास जात, (वेश्याके प्रसंगसे ॥

इस कवित्तसे मालुम हुआ होगा कि कैसे २ नुकशान, होते हैं.

कई मनुष्य यहांपर प्रश्न करते है कि वेश्यागमन निषेध किया मगर वेश्याको नचानेमें तो कोई हर्ज नहीं ?

उत्तरमें विदित हो कि यह तो उस वाली वात हुई कि "चोरी करना बुरा है मगर डाका डालना तो बुरा नहीं" अरे भाई ! यह तो उसका भी गुरू घंटाल है वेश्यागमनके व्यशनको पैदा करनेका एक मुख्य कारण (Prmeipal Reason)

जिस वक्त वह उमदा पोपाक (Fashionable Dress) पहिनकर नृत्य करने लगती है उस वक्त हाथ, पैर आंख मुख आदि सर्व शरीर द्वारा ऐसे विकारतासे लटके करेगी

कि शीघ्रही कामदेव जागृत होजावे, यहांतक कि वाज वक्त किसी भी प्रयत्नसे उसे व्यभिचार करनाही पडे, इसलिये नृत्य कराना वहुत बुरा है वेश्यागमनसे भी इसे रोकनेका पहिले प्रयत्न करना चाहिये.

नृत्य करनेवालेको सुज्ञ पुरुष तो तिरस्कार करतेही है, मगर खास वह नृत्य करनेवाली वेश्याही और तवले सारंगी भी लालत (धिक्कार) देते है कहा गया है:—

कवित्त ।

सुकाजको छोड कुकाज करे, धन जात है व्यर्थ सदा तिनको । यक रांड़ बुलाय नचावत है, नहीं आवत लाज जरा तिनको ॥ मृदंग कहै धिक है धिक् है, सुरताल पुछे किनको किनको । तव उत्तर रॉड वतावति है धिक है इनको इनको इनको ॥ १ ॥

देखिये जीवा जीव दोनोंही धिक्कार दे रहे है मगर अज्ञानी लोग कर्मके मर्मको बिलकुल नहीं समझते और अनर्थ करनेको तत्पर होजाते हैं इसलिये—

भो सुखाभिलापी ! वेश्या गमन और वेश्या नृत्य दोनोंही परित्याग करना चाहिये जिससे सुकृत्य करके सद्-गतिको प्राप्त हो.

पांचवां व्यसन शिकार खेलना ।

इस व्यसनको सेवन करनेवाला प्राणी दुष्टताको धारण

करके विचारे निरापराधि जीवोंको मारकर अपनेको धन्य समझते हैं, क्या ऐसी हालतमें वे अपना भलाकर सक्ते है ? नहीं २ तावक्तेकी अपनी आत्मा सदृश परात्माको न मानी और समभाव ग्रहण न किया सद्‌गति मिलना दुष्वार है, तीर्थंकर, गणधर और महानाचार्य यहांतक फरमाते हैं कि हमेशा चोरासी लक्ष जीवा योनीसे क्षमा मांगना चाहिये तो उन्हें प्राण मुक्त करना अथवा उनकी जानको तकलीफ पहुँचानेका तो कहनाही क्या ? देखिये कहा है:—

खामेमि सव्वेजिवा। सव्वे जीवा खमंतुमे (गाथा)
मित्तिमे सव्वभूरासु। वेरं मझंन केणई ॥ १ ॥

अर्थ—वैर भावको दूर करके, सर्व जीवोंसे मित्र भाव रखता हुआ, सर्व जीवोंको क्षमाता हूं, सर्व जीव मुझे क्षमा करें।

"अहिंसा परमो धर्मः" के आचरण करनेवाले प्राणी इस भव और परभव और भवोभवमें सुखी होते हैं

जिसने हिंसा करना परित्याग किया है उसमें कोमलता आकर निवास कर देती है, और जहाँ कोमलता है वह सद् मार्गका आचरण मौजूद है और जहां सद् आचरण है वहां सद् गतिकी प्राप्ति है, कहा है—

सर्व हिंसानिवृत्ताये । येच सर्व सहानराः ॥
सर्वस्याश्रयभूताश्च । ते नरास्वर्ग गामिनः ॥ १ ॥

अर्थः–जो मनुष्य सर्व हिंसा करके रहित, सर्व सहन करनेवाले व सकलके आश्रयभूत होते हैं, ये देवलोकमें प्राप्त होते हैं।

क्या जैन, क्या वैष्णव, क्या मुसलमीन, क्या कृश्चनादि सबही मजहबोंके अन्दर हिंसा करना बुरा माना है, देखिये एक अंग्रेजी कविने कहा है --

(Long Fellow)

Tuin turn thy hasty foot asibe,
Nor crusk that helpless worm,
The frame thy scornful thoughts deridi,
From god reecived its form (1)
The commonlord of all that move,
From whom thy being flowed,
A portion of his foundless love,
En that poor worm bestowed. (2)
The sun the moon the star he made,
To all his creortures free,
And spread over carth the grossy blade,
For worms as well as thee (3)
Let them enjoy their little day,
Their humble bless receive,
Eh, donot, lightly take away,
The life thou canst not give (4)

अर्थ—ए उतावलसे चलनेवाले तेरा फुरतीला पांव अलग हटा, उस विचारे विना शाहय कीडेको न कुचल, जिस शकलपर की तेरे घृणीत खयाल पैदा होते हैं, वह ईश्वरकी बनाई हुई है. तमाम त्रस प्राणियोका स्वामिन् जिससे कि तेरी आत्मा भी हुई है, अपने अपार प्यारका थोड़ासा हिस्सा इस विचारे कीड़ेको भी दिया है. उसने सूर्य, चन्द्र, तारे बनाये हैं, और उसके तमाम प्राणियोंको आजाद किये है और पृथ्वीपर हरी २ सबजी फैलाई, सबब उसके लिये तूं और कीडा बराबर है. उन विचारोंको उनके थोड़मे दिन सानंद बसर करने दे और जिस जानको तू नही दे सक्ता उसे जान बूझ कर न ले।

उपरोक्त कविता (Po~m) से आपको विदित होगया होगा कि अंग्रेज लोगोमें भी कितनेही दयालु लोग अपने सद्मार्गके रास्तेको पकडे हुए है।

हिंसा करनेवाले प्राणी यदि बहादुरीको अख्तियार किये हुए हैं तो क्योंकर अपने शत्रु कर्मोंको नष्टकर दिखाते है, केवल आडम्बरके डोलमें घूमते हुए अकृत्य करके दुर्गतिके भागी होते हैं।

वीर पुत्रो ! आगेके बहादुर क्षत्रियोंने अष्ट कर्मको नष्टकर शिवपुरमें निवास किया है आज कलके कायर क्षत्री लोग विचारे निरपराधि जानवरोंको मारकर बहादुर होनेका

हौसिला रखते हैं और आप सदृश कोई वड़ा (महत्व) नहीं भरोसा मानते है।

आप जानते हैं कि वड़ा वही हो सक्ता है जो अपनेमे सर्वको वड़ा मानकर आप लघुता धारण करता है। देखिये कहा है—

दोहा।

लघुतासे प्रभुता मिले, प्रभुतासे प्रभु दूर ।
जो लघुता धारण करे, प्रभुता नहीं है दूर ॥ १ ॥

जहांतक प्राणी समभावना न रक्खे पूर्णता सहन शीलता न रक्खे वड़ा नहीं कहला सक्ता, देखिये बाजारमें जो विकनेको वड़े आते है वो भी कितनी शीलताको धारण करते हैं तब "वडे" कहलाते हैं।

कवित्त।

पहिले थे हम मर्द, मर्दसे नार कहाये ।
कर गंगामें स्नान रोग सब दिये बहाये ॥
कर शिलनसे युद्ध पीस चूरन करवाये ।
लगे मसाला पान मरे मंमनके गारे ॥
चडे कडायो धरि घाव तन बरछी ग्वारा ।
जले हूँ छूटक नाहि विके तब बडे कहारा ॥ १ ॥

इसलिये भो देवानु प्रिय ! यदि वड़े महत्पनको चाहते हो वहादुर कहलाते हो उच्च कुलका दावा रखते हो तो द्रव्य

और भाव दोनों हिंसा परित्याग करना चाहिये जिससे शीघ्र ही सद्गती प्राप्त हो.

छठा व्यसन चोरी करना।

इस व्यसनको सेवन करनेवाले प्राणीकी कैसी दुर्दशा होती है, यह प्रत्यक्ष प्रमाणसे सिद्ध है।

चोरी करनेवाले महाशयको किसीको एक माह किसी छः माह किसीको एक वर्ष किसीको पांच वर्ष आदि नाना प्रकार की सजाएं (Punishments) मिलती हैं।

चोर लोग यही विचार करते है कि मुफ्तका माल लेकर खूब मौज उड़ावें मगर आप जानते हैं कि अन्यायका पैसा कहांतक काम दे सक्ता है, पापका घड़ा अखीरको फूटताही है, चाहे कितनी भी होशियारी क्यों न कीजाय, देखिये कहा गया है-

त्रिभिर्वर्षै स्त्रिभिर्मासै । स्त्रिभिः पक्षै स्त्रिभिर्दिनैः ।
अत्युग्र पुण्य पापाना । मिहैव फलमश्नुते ॥ १ ॥

अर्थ -उग्र पाप पुण्यका फल तीन दिन या तीन पक्ष या तीन मास या तीन वर्षमें प्राप्त होता है।

चोर लोगोंको हमेशा धोका बना रहता है कि किसी न किसी दिन मेरी अवश्य दुर्दशा होगी और इसही चिन्तासे कोई कार्य निर्विघ्नतासे नहीं कर सक्ते।

चौर लोग कदाचित् यह विचार करे कि मे चोरीके द्रव्यसे धर्मकृत्य करके मेरे बंधनको दूर कर दूंगा मगर यह कभी नही हो सक्ता वारणकी अन्यायका पैसा न्यायमे और न्यायका अन्यायमें फल दायक नहीं हो सक्ता।

इसपर मुझे एक दृष्टान्त स्मरण होता है, पाठकगण ध्यान पूर्वक पढ़े।

इसही जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रके अन्दर मगध देशमे अर्तात्र मनोहर एक नगर था, उसमे वडे २ विशाल ध्वजा तोरणादिसे शुशोभित जिनेश्वरके मन्दिर थे तथा कई एक दृढ़धर्मी सम्यक्तवको धारण करनेवाले भव्यश्रावक वर्गनिवास करते थे।

वहांपर चन्द्रसेन नामका राजा अनेक राजाओंसे शोभायमान होता हुआ सुख पूर्वक राज्य करता था।

एक दिन राजाने विचार किया कि एक मजबूत शहरपना (Fortification) बनाना चाहिये जिससे प्रजाकी रक्षा हो और सब लोग सानन्द मेरे राज्यमे निवास करे।

ऐसा विचारकर ज्योतिषशास्त्रके अन्दर निपुण ज्योतिषी (Stiologer) को बुलाया और अपनी मनोकामना सर्व कही।

ज्योतिषीने गवेषणा करके उत्तर दिया कि पृथ्वीनाथ! आगत रवीवारको प्रथम प्रहरके बाद उत्तम मुहूर्त है. राजाने उनको बहुतसा पारितोषक (Reward) देकर विदा किया

और कहा कि नियमित दिनपर सर्वसामग्री लेकर हाजिर होजाना।

जबकि शनिश्चरवार आया उस दिन राजाने सर्व नौकरोंको चतुरंगी सैना सज करनेका हुकुम बक्षा और गांवमें डूंडी फिरानेकी आज्ञा दी कि सर्व प्रजा प्रातःकालमें जल्समें शरीक होवे अर्थात् उस स्थानपर (जहाँकी नीव डाली जावेगी) हाजिर रहें।

बमुजिब आज्ञाके सर्व व्यवस्था करदी गई।

दूसरेही दिन सर्व प्रजा प्रातःकालमेंही नियमित स्थान पर पहुँची।

इधरसे सरकार अपनी चतुरंगी सैनाको लेकर रवाने हुए यह दृश्य एक अलौकिकही था। राजाके पहुँचतेही सर्व प्रजाने जयध्वनिकी, और यथोचित सेवाकी।

राजाने ज्योतिषियोंको पूँछा कि सर्व वस्तु हाजिर है, उसने निवेदन किया कि हुजूर सिर्फ न्यायसे उपार्जन कीहुई सातों मोहरोंकीही आवश्यकता है बाकी सर्व द्रव्य मंगलिककी वस्तुओंमें हाजिर हैं।

राजाने अपने खजानची (Treasurer) को मोहरें लाने की आज्ञा दी इतनेमें ज्योतिषीने कहा हुजूर आपके खजानेकी मोहरें काम नही आसक्ती कारण कि वहां न्याया-

न्याय सर्व मिश्र है कृपाकर यहांपर एक निर्मल धर्मधारी न्यायशीलसागर चन्द्र नामक सेठ रहता है उसका पैसा न्यायोपार्जन है।

सुनतेंही सरकारने सब समाचार कहकर नौकरोंको बग्गी लेकर भेजो।

नौकर लोगोंने सेठसे सब प्रार्थना की और कहा बग्गी हाजिर है बिराजो।

सेठने उत्तर दिया भाई मै चलनेको तैयार हूं मगर बग्गीमें मैं नहीं बैठूंगा, कारण कि मैं न तो इन घोड़ोंको खानेको देता हूं न तुम्हें नौकरी (Pay) देता हूं।

ऐसा कहकर पैदलही दौडता हुआ राजाके पास पहुँचा।

राजाने सर्व हाल कहे और सात मुहरोंकी याचनाकी और कहाकि इसके यवजमें जितना द्रव्य तुम चाहो देनेको तैयार हूं।

सेठने कहा हुजूर न्यायका पैसा अन्यायियोंके काम नहीं लग सकता।

राजा क्रोधित हो धमकाने लगा और मोहरें जबरन लेनेकी चेष्टाकी कि इतनेमेंही ज्योतिषीने कहा हुजूर ऐसा करनेसे वह मोहरें भी अन्यायकी होजावेंगी।

राजा लाचार होकर कुछ भी व्यवस्था नहीं कर सका और नीवका मुहूर्त्त चूक गया।

राजाने सर्वके समक्ष कहा कि न्यायान्यायके पैसेकी अवश्य परीक्षा करना चाहिये यदि सेठका पैसा न्यायका निकलता तो ठीक वरना इसको सकुटुम्ब सूलीपर चढ़ा दूंगा मेरा बहुतही अपमान किया है।

ऐसा कहकर सात मोहरें एक आदमीको देकर पूर्व दिशा Est) में रवाना किया और खानगी समझा दिया कि अच्छे धर्मात्मा पुरुषको देना जिससे दुष्कृत्यमें न जाय।

इसी प्रकार सात मोहरे सेठसे लेकर एक पुरुषको पश्चिम दिशामें (Wet) भेजा और खानगीमें सावधान किया कि किसी दुष्टको देना जिससे दुष्ट कार्यमें लगे।

ये दो मनुष्य दोनों दिशाओंमे गये अब क्या २ घटना हुई सो पृथक् २ लिख दिखाता हूं।

पूर्व दिशावाला (जो कि राजाकी मोहरं लेकर गया था। एक वियामान जंगलमें जा निकला देखता क्या है कि एक योगी अपनें योगमुद्रामें तनमय है।

उस पुरुषने विचारा कि इसहीको यह मोहरें अर्पण करदूं मगर इसके चाल चलन (Conduet) से तो वाकिफ होना चाहिये कि यह योगी अथवा ढोंगी है।

उसी वख्त निकटवर्ती झोपड़ीमें रहनेवाले गृहस्थसे पूंछा कि इन योगीकी क्या हालत है।

उस गृहस्थने उत्तर दिया कि यह आज बारह वर्षोंसे

योगसाधन करता है शीयलमें दृढ़ है आदि अनेक गुण सम्पन्न है।

उस पुरुषने वे सातों मोहरें उसके चरणोंमें रखदी और किसी एक वृक्षकी ओटमें छुपा हुआ योगीकी लीलाको देखनेकी गवेषणा कर रहा है।

ज्योंही योगीने मुद्राध्यानसे अपने पलक खोली कि मोहरें दृष्टिगोचर हुई. उसने विचारा कि मेरे योगपर कोई देव प्रसन्न हुआ है, मोहरोंको हस्तगत करतेही उसके प्रकृतिमें विकृति होगई, और अब क्या विचार करता है कि—
मैंने इस संसारमें आकर मनुष्य जन्म वृथा गमा दिया, खाना, पीना, ऐस आराम कुछ भी न किया खैर "भले जबसे एक" ऐसा वह विचार एक शहरमें पहुचा और एक वेश्याके यहां जाकर भोग विलास किया।

ये सर्व हाल उस पुरुषने भली प्रकार जान लिये।

अब इधरसे वह पश्चिम दिशावाला पुरुष (जोकि सेठकी मोहरें लेकर गया है) किसी एक शहरमें पहुँचा, हमेशा दुष्ट पुरुषकी खोज करता है. इस तरह एक सरोवरके पास जा निकला, देखता क्या है कि एक धीवर मछलियें मार रहा है सैकड़ों मरी हुई मछियोंका ढेर लगा रहा है, उस पुरुषने विचार किया कि इसही महान् हिंसकको यह सप्त मोहरें दो ताके अधिक हिसा करे।

उस पुरुषने वे सातों मोहरें उस धीवरको दे दी और कहा "खाओ पीओ और मौज उड़ाओ" (Eat, drink and he marry)।

ज्योंही उसने वे मोहरें हस्तगतकी कि शुभ विचार पैदा हुआ।

हे प्रभो ! मैंने मनुष्यभव वृथा गमा दिया सैकड़ो जीवोंकी नित्य हिंसाकर दुर्गतिका प्रयत्न करता हूं।

हे नाथ ! इससे मुझे शीघ्रही मुक्तकर चरणका शरण दो आदि नाना प्रकारसे अपनी आत्माको धिक्कार देता हुआ अनित्य भावनाको भाने लगा, उसने विचारा "रोये राज कौन दे" खैर जो कुछ हुआ सो सही अब भी सावधान होजाना चाहिये किसी कविने ठीक कहा है।

दोहा।

बीती ताहि बिसारि दे, आगेकी सुधि लेय॥
जोवनि आवे सहजमें, ताही पर चित देय॥ १॥

अब उसने यह दृढ निश्चय किया आजसे कभी हिंसा न करूंगा; दूसरेही दिनसे न्याययुक्त निर्वद्य व्योपार करने लग गया।

यह सर्व हाल उस पुरुषने बखूबी जान लिये।

वे दोनों पुरुष अपने कार्य करके उस नगरमें पहुंचे और राजसभामें जाकर अपने २ सर्व वृत्तान्त कह सुनाये।

इसपर राजा वडा भारी शरमिन्दा हुआ और उस न्यायवान सेठका अत्यादर किया. कहनेका तात्पर्य यह है कि अन्यायका पैसा न्यायमें नहीं लगसक्ता।

ऐसा करनेसे दो तरहसे दोष आताहै प्रथम चोरीका दूसरा अन्यायका पैसा धर्ममें लगाना।

कोई ज्ञानी पुरुष चोरीमें सुख नहीं पाता स्थान २ पर चोरोंको दुःख होता है यही फरमाया है देखिये कहा है

चौरोदुःखमुपैतिनारकसमं सत्योऽपितन्मऽन्निधः।
शुष्के प्रज्ज्वलिते हिसार्द्रमपिकिनो वन्हिनादह्यते॥
सद्योल लंठन सज्ञदग्धचरमग्रामेऽग्नितप्तप्रजा।
मध्योत्पत्ति भवेसमं सगरजेः किं किं न लभे तथा १॥

अर्थ—चोर नरकमें रहनेवालेके सदृश दुःखको प्राप्त होते हैं और अन्य पुरुष भी जो कि उसके साथ रहते हुए भी दुःखको उठाते हैं-जैसे सूखे वृक्षके साथ गीला वृक्ष भी अग्निसे जलाया जाता है—चोरी करनेमें नाना प्रकारकी तकलीफें होती हैं—जब सर्व आदमियोंके लिये ग्राममें आग लगाई जाती है तब उस वक्त वहां रहनेवाले आगिमे

जलाई हुई भजा सगर पुत्रोंके बरोबर कौन ? कष्ट नहीं उठाती है।

इतने दुःख भोगने पर भी जो प्राणी चोरीको पसंद करते हैं वे बड़े दुःखी होते हैं।

भो आत्म हितचिन्तक ! इस अकृत्यसे हमेशा बचते रहना चाहिये।

सातवां व्यसन परस्त्री गमन।

———o———

इस व्यसनको सेवन करनेसे नाना प्रकारके दुःख प्राप्त होते है; कहा है—

दोहा।

लाजघटे तुझ कुलतणी। घटे तहारूं ज्ञान ॥
आयुष्यने चैतन घटे। घटे जगतमें मान ॥ १ ॥

आप जानते हैं कि परस्त्री वहांतक स्वस्त्रोक सदृश रहती है जहांतककी पुरुषके पास द्रव्य हो, पैसा नहीं होनेकी हालतमें बड़ी दुर्दशा करती है कहा है—

कवित्त।

जबतक पैसा पास रहेगा। मीठी बात सुनावेगी ॥
कंगालीकी यार हालतमें। जूते मार निकालेगी ॥ १ ॥

परस्त्रीके प्रसंगसे रावणादि महान् राजाओंका भी विध्वंस हुआ तो पामर प्राणियोंकाका कथनहो क्या ?

परस्त्रीको सेवन करनेवाला और उच्छिष्ट पदार्थको भक्षण करनेवाला बरोबर हैं.

आपको मालुम है ? कि लौकिकमें उच्छिष्ट पदार्थका कौन अधिकारी है, हां हां; मालुम हुआ उच्छिष्ट पदार्थोके अधिकारी चांडाल लोगही हुआ करते हैं.तो क्यों सज्जनो! जब उच्छिष्ट भोजनके अधिकारी चांडाल लोग हैं तो ऐसी मल मूत्रसे भरी हुई दुर्गंध और असुचि पदार्थके उच्छिष्ट भोक्ताको क्या पद (Title) निर्माण करना चाहिये ? (उत्तर) नीच कृत्यको करनेवालेको महा चांडालकी पदवीही उनको शुशोभित हो सक्ती है.

हाय हाय ! धिक्कार हो उन पुरुषोको कि जो महा चां-डाल और चांडालके शिरोमणी पदवीको धारण करनेपर भी अपने दुराचरणको नहीं छाड़ते, क्या दूसरेकी स्त्रीको भोग कर अपनी यश कीर्ति फैला सक्ते हैं, कदापि नहीं टौर २ नीच दशाको ही प्राप्त होते हैं.

परस्त्रीके सेवन करनेवालेको चौथा मैथुन अव्रतके साथ का साथ तृतीय अदत्तादान अव्रतका भी प्रायश्चित लगता है कारन कि उसकी स्त्रीको बगैर उसके पतिके आज्ञाके भोगी जाती है.

दुनियामें दो बात बडाभारी मानी जाती है—

दोहा।

लाज जगतमें होय वातकी। चोरी और अन्याई ॥
इसको सेवन करनेवाले। केवल दुर्गति पाई ॥ १ ॥

परस्त्रीके सेवन करनेवालेको यह दोनों कलंक प्राप्त होते है, जिससे इस भवमें बड़ी दुर्दशा होती है तथा परभवमें नरक (Hail) प्राप्त होती है.

यदि आपने नरकका चित्र देखा हो तो मालुम होगा कि परस्त्री सेवन करनेवालेको जलते हुए स्थंभ पकड़वाये जाते है, जैसे उसने परस्त्रीको आलिंगन किया तैसेही उन स्थंभसे आलिंगन करवाया जाता है यहींतक नही बल्कि भवोभवमें दुःखका भागी होता है कहा है—

मूढ़ः परस्त्रिय सुपेत्य कुवाक्यवंध ।
घातापकीर्ति मृति दुर्गति दुःख पात्रम् ॥
स्याद्ब्राह्म राज युवती रति दीर्घ पाप ।
लक्ष्म क्षयविव विधोर्गुरु तल्पगस्य ॥ १ ॥

अर्थ—मूर्ख पुरुष परस्त्रीका समागम करता है उससे अनेक प्रकारके दुर्वचन, बन्धन, दण्डादि प्रहार, अपयश मरना, दुर्गति और दुःखको प्राप्त होता है, जैसे कि गुरु स्त्रीका संग करनेवाले चन्द्रमाको उसकी स्त्रीके संगतसे पापके वश कलंक और क्षय दशाकी प्राप्ति हुई।

परस्त्रीके सेवन करनेवालेको हमेशा भय बना रहता है कि इसके माता, पिता, भाई, सासु, सुसर, पति, देवर, जेठ, कुटुम्ब, परिवार, राजादि मुझको दुःख न दें, मेरी दुर्दशा न करदें मेरी इज्जत न लेलेवें, इस प्रकार दुःखोंके कारण आभ्यान्तर रोगोत्पत्ती होजाती है अर्थात् चिन्ता आकर निवास कर देती है जिससे वह प्रतिदिन दुःखित होता जाता है, चिन्ता एक ऐसी बीमारी है कि जिसकी औषधी (Medicine) धन्वन्तरि वैद्यके पास भी न थी देखिये कहा है कि—

दोहा ।

चिन्ता डाकन मन वसी, चुट चुट लोही खाय ॥
रतिमें परतिय संचरे, तोला तोला जाय ॥ १ ॥

और भी कहा है—

दोहा ।

चिन्ता चिताका एक रस, इसमें अन्तर येह ॥
चिता जलावे मृतकजन, चिन्ता जीवितदेह ॥ १ ॥

जहांतक विचार किया जाता है यही विदित होता है कि परस्त्रीको सेवन करनेमें सर्वथा दुःखोंकी प्राप्ति है ।

इसलिये—भो भव्य प्राणी ! इस महान घोर पापसे बचते रहिये जिससे व्यवहारिक और धार्मिक दोनोंही साधन बरोबर चलते रहै ।

इन सात व्यसनोंकी सामान्य व्याख्यासे आपको विदित होगया होगा कि इनके सेवन करनेसे कितने २ दुःख उठाना पडते है।

इतने दुःख होते हुए भी जो प्राणी इन व्यसनोंको सेवन करते हैं वे अपने सद्धर्म पर कुल्हाड़ा मारते हैं ऐसा समझना चाहिये नहीं बल्कि महामूढ़ अज्ञानी और चौरासीमें रखडनेवाले समझना चाहिये।

भो आत्मार्थि प्राणियों! जब कि आपने बड़ेही कष्टसे यह रत्न चिन्तामणि मनुष्य भव पाया जाता है तो क्यों कंकरकी तरह गमाते है बारंबार ऐसा मौका नहीं मिलनेका आयुष्यकी पल भरकी मालुम नहीं क्यों नाहक कलंकोंसे गिरफ्तार होते हो मनुष्यका परम कर्त्तव्य मोक्ष मार्गका साधन है वह धन दौलत कुटुम्ब परिवार हाट हवेली और सांसारिक सुख सब यहींपर रह जावेगा।

देखिये छजलाणी वंशके कर्त्ता युवराज छजु कुमारजी फरमाते हैं—

कवित्त।

नंदनकी नव रही वीशलकी बीस रही।
रावणकी सब रही पीछे पछताओगे॥
उतते न लाये हाथ इतते न चले साथ।
इतहीकी जौरी तोरी इतहीं गमाओगे॥ १॥

हम चीर घोडा हाथी काहुके न चले साथी ।
वाटके बटाउ जैसे कलही उठ जाओगे ॥
कहत है छजुकुमार सुनो हो मायाके यार ।
बँधी मुट्ठी आये थे पसार हाथ जाओगे ॥ ७ ॥

इसलिये भो मोक्षाभिलाषी ! इन महादुःखके दाता दुष्ट अकृत्योको दूरकर प्रति दिवस सुकृत्य कीजियेगा और अनुक्रमसे शुभ भावना भाते हुए शिवपुर (मोक्ष) में विराजकर अनंत सुखमें लयलीन होजाइये । ॐ शान्ति शान्तिः शान्तिः ॥

सर्व मङ्गलमाङ्गल्यम् । सर्व कल्याण कारणम् ॥
प्रधानंसर्वधर्माणाम् । जयनंजयतिशासनम् ॥ १ ॥

इति समाप्त ।

॥ ॐ ॥

॥ श्रीजिनकुशलगुरुभ्यो नमः ॥

गुरुभक्तिपर स्तवन

सुनो सुनो कुशल गुरु प्यारा ।
तुम जीवन नाथ हमारा ॥ टेक ॥
मै दर्शन करने आया ।
मुझ आनन्दने न नमाया ॥ सुनो० ॥ १ ॥
मैं अष्ट कर्ममें रमिया ।
मै भव २ दुःखमें भमिया ॥ सुनो० ॥ २ ॥
तुम वहु जीवनि तारया ।
तुम वहु उपकार वताया ॥ सुनो० ॥ ३ ॥
मै दीन शरण तुझ आया ।
शुभ भावना दिलमें भाया ॥ सुनो० ॥ ४ ॥
वीर सम्वत् अति मन भाया ।
चौवीसो अड़तीस छाया ॥ सुनो० ॥ ५ ॥
वैशाख पूर्णिमाध्याया ।
भानुपुर ठाठ मचाया ॥ सुनो० ॥ ६ ॥
तुझदास आनन्द गुण गाया ।
सुख संपत्ति सवही पाया ॥ सुनो० ॥ ७ ॥

॥ इति शुभम् ॥